संस्कृत साहित्य में लोकोक्तियाँ

*डॉ. शिप्रा पारीक

लोकोक्ति संस्कृत निष्ठ शब्द है जन साधारण भाषा में इसे कहावत भी कहा जाता है। यह लोकप्रिय उक्ति होती है। जो कि सार सर्भित होने के साथ–साथ संक्षिप्त और प्रभावी भी होती है। इसका प्रयोग किसी को उपदेश देने, भूल की ओर ध्यान दिलाने, किसी पर कुछ कहने उपालम्भ देने, व्यंग्य करने, मीठी चुटकी लेने या अपने कथन को प्रमाणित करने के लिये किया जाता है। यह सीधे हृदय को छू जाती है और व्यक्ति के व्यवहार पर प्रभाव डालती है।

संस्कृत साहित्य में लोकोक्तियों का भरपूर प्रयोग देखा जाता है। लोक शब्द की व्यत्पत्ति ''लोक्यते असौ'' लोक+घञ्। लोक का दूसरा अर्थ है जनसा मान्य इसी का हिन्दी रूप ''लोग'' प्रचलित है इसलिये लोकोक्ति जनसामान्य की उक्ति कही जाती है।

अलंकार शास्त्र में लोकोक्ति को एक अलंकार के रूप में माना गया है अप्ययदीक्षित ने इसका लक्षण निम्न प्रकार किया है :–

लोकप्रवादानुकृतिर्लोकोक्तिरिति भण्यते।

सदम्ब कतिचिन्भासान् मीलायित्वा विलोचने।।

कोई नायक विरहिणी नायिका को संदेश भेज रहा है कि ''हे सुन्दरी आंखे मीचकर कुछ महीने और गुजारलो यहां ''आंखे मीलन'' यह लोक कहावत का ही रूप हैं। इस प्रकार यंहा कम शब्दों में हृदय को छूलेने वाली यह प्रभावशाली उक्ति हो गयी है। इसी प्रकार –

नामैव ते वरद! वाञ्छिम दातृभावं।

व्याख्यात्यतो न वहसे वरदानमुद्राम्।

विश्वप्रसद्धितर विप्रकुल प्रसूते–

र्यज्ञोपवीतवहनं हिन खल्वपेक्ष्यम्।।

हे वरद, आपका नाम ही याचक को ईष्सित वस्तु देने के भाव को व्यक्त करता है अतः आप वरद मुद्रा को धारण नहीं करते। संसार प्रसिद्ध ब्राह्मण कुल में उत्पन्न व्यक्ति से केवल यज्ञोपवीत को धारण करने की ही आशा नहीं की जाती।

यंहा केवल यज्ञोपवीत धारण करनें से ही ब्राह्मण नहीं हो जाता। इस लोक कहावत का अनुसरण किया गया है जिसमें यह समक्ष विकार होती है कि ब्राह्मण को ब्राह्मणत्व के कार्य जैसे यजन याजन–अध्ययन–अध्यापन इत्यादि में पूर्ण होना चाहिये अगर वह उपर्यक्त कार्यों को नहीं करता और केवल यज्ञोपवीत धारण करता है तो उसका ब्राह्मण होना व्यर्थ ही है।

भोजराज ने अपने सरस्वती कंणभरन में छाया नामक शब्दालंकार की कल्पना की है इस अलंकार के दो भेद लोकोक्ति छाया तथा छेकोक्तिछाया हैं जब काव्य कविद्वारा लोकोक्ति का प्रयोग हो तो लोकोक्तिछाया होती हैं

अन्योक्तिनामनुकृतिश्छाया सापीहषड़विद्या।

लोकच्छेकार्म कोन्मत्तपोटामन्तोक्तिभेदतः।।

इसका उदाहरण के रूप में भोजरा ने मेघूतम् के श्लोक को उद्धृत किया हैं –

शापांतो में भुजगशयनादुरयिते शार्ग्पाणौ।

शेषान् मासान् गमय चतुशे लोचने मीयित्वा।।

अर्थात् जब भगवान विष्णु शंषशम्या से जग जायेंगे तब मेरा (यक्ष) का शापान्त होगा अतः आज से (आषाढ़) से चार मास बचे हैं इनको आंख मीचकर बिता देना। फिर मिलन होगा। यंहा उसकी लोकाप्रसिद्ध लोकोक्ति का प्रिय प्रयोग किया गयाा है। ''आंख मिचकर बिता दो'' यह सामान्य कलन की अपेक्षा अधिक और चमत्कार युक्त है। और श्रोता को व्यावहारिक रूप से प्रेरित करने वाली है।

आययदीक्षित ने लोकोक्ति के एक विशेष प्रकार का प्रयोग छेकोक्ति माना है जब कोई समझदार व्यक्ति (छेक) लोकोक्ति का प्रयोग कर किसी गूदार्थ को व्यंजना करता है तो उसे छेकाक्ति कहते हैं। –

छेकोक्तियंत्र लोकोक्तेः स्यादर्थान्तरगर्मिता।

भुजग इव जानीते भुजग्चरणं सखे।।

अर्थात् जंहा लोकोक्ति के प्रयोग में कोई दूसरा अर्थ छिपा हो वंहा छेकोक्ति अलंकार होता है – जब कोर्ठ व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के विषय में पूछता हैं कि आजकल वह कैसा है क्या हाल–चाल हैं उसके तब जिससें पूछा जा रहा है वह व्यक्ति किसी समीपस्थ व्यक्ति की ओर देखता हुआ कहता है कि ''सांप ही सांप के पांव जानता है'' इस लोकोक्ति से समीपस्थ व्यक्ति तथा जिसका हाल–चाल पूछा जा रहा है दोनों व्यक्तियों का किसी एक ही व्यापार कार्य में सहचारी हैं तथा उसके वृत्तान्त के विषय में यही जान सकता है और जो कार्य दोनों के महय कार्य है वह भी नैतिक नहीं हैं वह काम व्यापार भी हो सकता है इत्यादि व्यंग्य इस लोकोक्ति में छुपा हुआ है अतः यह छेकोक्ति लोकोक्ति का ही प्रकार है।

इसी प्रकार –

मलयमरूतां व्राता याता विकसित मल्लिका

परिमलभरो भग्नो ग्रीष्मस्त्वमुत्सहसे यदि

घन! घ्टाटय तं त्वं निःस्नेहं य एवं निवर्तने

प्रभवति गवां किं नश्छिन्नं स एव धनंजय।।

कोई स्नेह शून्य नायक अपनी नायिका को विरहिणी बनाकर परदेस चला गया तो नायको को उद्देश्य कर सिी सखी की नायिका के प्रति यह उक्ति है उसमें वह बादल के बहाने रही है कि मेलय पर्वत से आने वाले दक्षिणानिल के समूह चले गये अर्थात् चन्दन की सुगन्धों वाले दक्षिण दवाओं के श्लोक समाप्त हो गये। इस प्रकार नायिका की बसंत ऋतु यूं ही बीत गयी। खिली हुयी मल्लिका के सुगंध भार वाला ग्रीष्म भी समाप्त हो गया उसकाल में भी वह नायक नहीं आया। तब हे बादल यदि तुम उत्साह करो तो उस स्नेहरहित नायक को नायिका से मिला सकते हैं। अर्थात् वर्षा ऋतु शेष है यदि उसमें वह आये तो आजाये क्यों कि शत्रुओं के द्वारा हरी गयी ''गायों को वापस लौटाने में जो समर्थ हो वही धनंक्य कहलाता है''

यहां पर लोकोक्ति में राजा विराट की गायों को अर्जुन के द्वारा शत्रुओं से लोटा लाने की, पौराणिक कथा की और संकेत किया गया है इसमें नायक को इसलिये बैल या गया के समान मूर्ख माना है क्योंकि वह अपनी सौंदर्य शालीनि नायिका को विरहिणी बनाकर चला गया और दो ऋतुयें बीतने पर भी नहीं आया अतः वह रसज्ञ नहीं है मूर्ख हैं उसका वही परदेस से बुला सकता है जो उसें धन कमाने से विमुख कर नायिका के प्रेम की और ले आयें जो लेकर आयेगा वहीं धनंजय होगा'' इस प्रकार का व्यंग्यार्थ इस छेकोक्ति में भरा है। अतः अत्यन्त–आस्वादक होग गयी है।

लोकोक्ति सामान्य व्यवहार वैशिष्ट्योत्पादन का माध्यम है जिसको संस्कृत भाषा एवं साहित्य में स्थान है – ''दूखः पर्वताः रभ्याः'' यह कहने पर दूरस्थित सुहावनी लगनी वाली वस्तु का आकर्ष्शन कम हो जाता है इसी प्रकार ''वीर भोग्या वसुन्धरा'' कहने पर वीरता का महत्त्व व्यापित होता हैं। ''अन्धस्यदीपों बधिरस्य'' गीतम्'' विषय की निरर्थकता, जीवन नरो भ्रदशतानि पश्यति यहा जीवन जीने की सर्थकता, बुमुक्षितं किं न करोति पापम्'' यंहा अभावग्रस्त के अपराध की क्षम्यता, ''जल बिन्दु निपातेन क्रमशः पूर्यते घटः'' यंहा छोटे अंश का महत्त्व, ''निरस्त पादपेदेशे एूडोडपि व्रुमायते'' यंहा एकाधिकार में व्यक्ति अयांग्य व्यक्ति का भी महत्त्व हो जाना ''पावको लोहसंगेन मुदगरैर मिहन्यते'' खराब संगत की हानी इत्यादि लोकोक्तियों में अर्थो की प्रभावोत्पादकता स्पष्ट ज्ञात होती है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में विदुषक अपनी व्यथा सुनाता है कि दुष्यन्त के साथ शिकार खेलते हुये उसे बहुत पीड़ा हो रही है लेकिन उसके ऊपर दूसरी बात यह हो गई है कि उसने शकुन्तला को देख लिया है अतः वह पुनः राजधानी जाने का नाम भी नहीं ले रहा है। तो यह एक पीड़ा के ऊपर दूसरी पीड़ा है इसके लिये, ''अयं गण्डस्योपटि पिटकः संवृतः'' इस लोकोक्ति का प्रयोग किया गया है।

इसी प्रकार अभिज्ञज्ञन शाकुन्तलम् के ही चतुर्थ अंक में ''अर्थोहि कन्या परकीय एवं इस प्रकार कन्या को पराया धन कहते हुये लोकोक्ति का प्रयोग किया गया हैं। मुद्राराक्षस नाटक में चाणक्य और सेठ चन्दनदास के वार्तालाप में जब चाणक्य चन्दनदास को राजा चन्द्रगुप्त के प्रतिकूल में जब चाणक्य चन्दनदास को राजा चन्द्रगुप्त के प्रतिकूल आचरण की बात करते हे तो सेठ चन्दनदास कहता है कि कौन है ऐसा जो राजा के विरूद्ध आचरण कर रहा है तब चाणक्य कहता है कि वे आप ही है ऐसा कहने पर सेठ चन्दनदास कि यह उक्ति ''कीदृशस्तृणानामग्निना सह विरोधः'' अर्थात् हे महामंत्री चाणक्य हमारे जैसे घास तिनकों का अग्नि के साथ कैसा विरोध''। यह लोकोक्ति प्रभावपूर्ण एवं चमत्कारक है। इसी प्रकार मुद्राराक्षस के ही प्रथम अंक में नाटक के अच्छे सभा में प्रदर्शित होने से वह उत्कृष्ट हो जाता है इस बात को ''चीयते बालिशस्यापि सष्य क्षेत्रपतिता कृषिः'' अर्थात् अच्छे खेत में कोई अज्ञानी भी या बालक भी बीज डालता हैं तो वह बीज उत्तम समृद्धियों को प्रदान करता हैं।

इसी प्रकार ''न घटस्य कूपपाते राज्जुरपि तत्र प्रक्षेपतव्या'' घड़े के कुएँ में गिरजाने से रस्सी भी नहीं डाल दी जाती अर्थात् एक कार्य के बुरा होने पर दुसरा बुरा कार्य नहीं करना चाहिये।

मृच्छकटिक में ''मूले छिन्ने कुतः पादपस्य पालनम्'' जड़ो के कटने पर वृक्ष का पालन सम्भव नहीं है। अर्थात् व्यक्ति को अपने मूल पर ध्यान देना चहिये।

अभिज्ञान शाकुन्तलम् में जब दुर्वासा ऋषि शकुन्तला को शाप दे देता है तो पूछ जोने पर शकुन्तला की सखि कहती है ''को अन्यो हुतवहाद दग्धुं प्रभवति ''आग के अलावा जलाने में कौन सक्षम है। अर्थात् क्रोधी व्यक्ति ही किसी का अनिष्ट कर सकता है, इस लोकोक्ति का प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार संस्कृत साहित्य में लोकोक्तियों का चमत्कार सामाजिकों को, सहृदयों को आनन्दित करता है एवं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष साहित्य के प्रयोजनों को प्राप्तव्य बनाता है।

***व्याख्याता, संस्कृत**

एस.एस. जैन सुबोध स्नातकोत्तर (स्वायत्तशासी) महाविद्यालय, जयपुर